वर्ष - 12, अंक - 3, जुलाई 2000, 65 - 66

अर्हत् वचन
कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर

जैनागम में प्राणायाम एवं ध्यान

■ पारसमल अग्रवाल *

नया स्तम्भ – आगम का प्रकाश : जीवन का विकास

अर्हत् वचन की लोकप्रियता एवं समसामयिक उपयोगिता में अभिवृद्धि एवं इसके पाठकों को जिनागम के गूढ़ रहस्यों से सहज परिचित कराने हेतु हम एक स्तम्भ **'आगम का प्रकाश – जीवन का विकास'** प्रारम्भ कर रहे हैं।

इस स्तम्भ के अन्तर्गत हम ऐसे लघु शोध आलेख या टिप्पणी प्रकाशित करेंगे जिसमें निम्नांकित विशेषताएँ हों -

1. जैनागम का कोई मूल उद्धरण अवश्य हो।
2. हमारे जीवन में सीधा उपयोगी हो। अर्हत् वचन के पाठक इस स्थल पर अपने जीवन के विकास / सुख / शांति के लिये कुछ प्राप्त करने के उद्देश्य से इस अंक की उत्सुक्ता से प्रतीक्षा करें व उन्हें अवश्य इससे कुछ शांति मिले।
3. जैन दर्शन के कोई कम प्रचारित या दबे हुए पक्ष की जीवन में महत्ता उद्घाटित होती हो।
4. नवीन वैज्ञानिक अनुसंधानों के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण हो।

उपर्युक्त 4 बिन्दुओं में प्रथम दो आवश्यक हैं व शेष 2 आवश्यक तो नहीं किन्तु हो जाये तो अच्छा है।

— सम्पादक

आज इस वैज्ञानिक युग में व पश्चिम जगत में ध्यान (Meditation) एवं प्राणायाम (Breathing Excercise) की शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के आधार पर महत्ता बढ़ती जा रही है। इन विषयों पर दर्जनों पुस्तकें अमेरिका के एक सामान्य से बुक स्टोर पर भी दिखाई देती हैं। अधिकांश जीवनोपयोगी पत्रिकाओं का कोई भी अंक इन विषयों के किसी बिन्दु को छुए बिना पूर्ण नहीं होता है। दो प्रश्न यहाँ उपस्थित होते हैं - आत्मप्रधान जैन दर्शन के आगम इनके बारे में क्या कहते हैं? जैनागम के अनुसार क्या हमारे जीवन में इनकी उपयोगिता है? इस लेख में हम प्राणायाम के सन्दर्भ मे इन प्रश्नों के उत्तर देखेंगे।

कई व्यक्ति ऐसा मानते हैं कि जैनाचार्यों ने प्राणायाम का समर्थन नहीं किया है। उदाहरण के लिये आदरणीय पं. बलभद्रजी की प्रसिद्ध पुस्तक 'जैन धर्म का सरल परिचय' से ऐसा ही लगेगा कि जैनाचार्यों ने प्राणायाम का विरोध किया है।[1] निम्नांकित श्लोक व कथन प्राणायाम का विरोध दर्शाने के लिये सामान्यतया प्रयुक्त होते हैं -

''प्राणाद्यामेन विक्षिप्तं मनः स्वास्थ्यं न विन्दति'' [2]

अनुवाद : प्राणायाम से विक्षिप्त मन स्वास्थ्य को नहीं प्राप्त होता है।

''प्राणस्थायमने पीड़ा तस्यां स्यादार्त्तसंभवः।
तेन प्रच्याव्यते नूनं ज्ञाततत्त्वोऽपि लक्ष्यतः॥'' [3]

अनुवाद : प्राणायाम में प्राण (वायु) के रोकने (आयमन) से पीड़ा होती है और इसमें आर्त्तध्यान संभावित है और उस आर्त्तध्यान से तत्वज्ञानी भी अपने लक्ष्य (समाधिस्वरूप शुद्ध भाव) से छुड़ाया जाता है।

अनेकान्त दर्शन की मान्यता को यदि हम एक - दो श्लोकों से ही समझना चाहें

* Chemical Physics Group, Department of Chemistry, Okalahoma State University, STILLWATER OK 74078 U.S.A.

तो कोई यह भी श्लोक बता सकता है कि जैन दर्शन में तो दया - दान को भी शुभबंध कहा है व इनको छुड़ाने की प्रेरणा दी है। किन्तु हम यह भी जानते हैं कि ऐसे कई श्लोक हमें देखने को मिलेंगे जहाँ साधक को प्रारम्भिक भूमिका में दया - दान के लिये प्रेरणा दी है।

इसी तरह आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानार्णव में 30 वें सर्ग में प्राणायाम का चन्द श्लोकों में ऋणात्मक पक्ष बताकर प्राणायाम से भी आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है किन्तु 29 वें सर्ग में 100 श्लोकों द्वारा प्राणायाम का वर्णन किया है, समर्थन किया है व महिमा गाई है। उदाहरण —

स्मरगरलमनोविजयं समस्तरोगक्षयं वपु: स्थैर्यम्।
पवनप्रचारचतुर: करोति योगी न सन्देह:॥

जन्मशतजनितमुग्रं प्राणायामाद्विलीयते पापम्।
नाडीयुगलस्यान्ते यतेर्जिताक्षरस्य वीरस्य॥ [4]

अनुवाद : पवन के प्रचार करने में चतुर योगी कामरूपी विषयुक्त मन को जीतता है व समस्त रोगों का क्षय करके शरीर में स्थिरता करता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। इस पवन के साधनरूप प्राणायाम से जीती हैं इन्द्रियां जिसने ऐसे धीर वीर यति के सैकड़ों जन्मों के संचित किये हुए तीव्र पाप दो घड़ी के भीतर - भीतर लय (नष्ट) हो जाते हैं।

इस सर्ग के तीसरे श्लोक में प्राणायाम के तीन लक्षण बताये हैं - पूरक (नाक द्वारा वायु भरना), कुम्भक (वायु को रोकना) एवं रेचक (वायु छोड़ना)। देखिये —

त्रिद्या लक्षणभेदेन संस्मृत: पूर्वसूरिभि:।
पूरक: कुम्भकश्चैव रेचकस्तदनन्तरम्॥ [5]

आगे के श्लोकों में पूरक, कुम्भक एवं रेचक का विस्तार आचार्य ने किया है।

प्रश्न यह उठता है कि यह विरोध एवं समर्थन एक ही आचार्य द्वारा एक ही ग्रन्थ में एक साथ क्यों? उत्तर स्पष्ट है - गृहस्थ की एवं सामान्य योगी की भूमिका में प्राणायाम उपयोगी है किन्तु आगे पहुँचे हुए योगी की भूमिका में श्वांस भरने, श्वांस रोकने व श्वांस छोड़ने का उद्यम करना उसके उच्च स्तर के ध्यान में उपयोगी एवं आवश्यक न होकर बाधक हो सकता है। जहाँ ध्यान, ध्याता व ध्येय का विकल्प न हो वहाँ श्वांस की तरफ ध्यान देने की बात बहुत दूर रह जाती है।

सारांश यह है कि हमें हमारे आचार्यों का पूर्ण अभिप्राय समझकर हमारी भूमिका के अनुसार आरोग्य व मन को स्थिर करने में उपयोगी प्राणायाम को अपनाना है। यहाँ यह भी विचारणीय है कि आज के कई प्रयोग यह सिद्ध कर रहे हैं कि ऐसा करने वाले बीमार कम होते हैं व उनको दवा खर्च बहुत कम होता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ज्ञानी की मान्यता में तो त्रिकालीध्रुव आत्म तत्त्व ही उपादेय होता है।

सन्दर्भ

1. बलभद्र जैन, जैन धर्म का सरल परिचय, कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर, 1996, पृ. 257
2. आचार्य शुभचन्द्र, ज्ञानार्णव, श्री परमश्रुत प्रभावक मंडल, श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, अगास, गुजरात, वि.सं. 2051, सर्ग 30, श्लोक 4, पृ. 237
3. वही, सर्ग 30, श्लोक 9, पृ. 238
4. वही, सर्ग 29, श्लोक 99 - 100. पृ. 235 - 236
5. वही, सर्ग 29, श्लोक 3, पृ. 222

प्राप्त - 4.5.2000